प्रकाशित: 22 नवम्बर 2018 को दैनिक जागरण में प्रकाशित-

वर्षों से कांग्रेस नेहरू-गांधी परिवार की जागीर बनी हुई है, यही है हकीकत की आधी-अधूरी तस्वीर

अद्वैता काला

दयनीय दशा से दो-चार हो रही कांग्रेस पार्टी ने इस महीने की शुरुआत में फिर से एक नया शिगूफा छेड़ा। पार्टी के एक वरिष्ठ नेता ने कहा कि यह पंडित जवाहरलाल नेहरू की नीतियों की ही देन है कि एक चायवाला देश का प्रधानमंत्री बन गया। ऐसा कहना उनके अहंकार भाव को ही प्रदर्शित करता है। भारत और भारतीयों की प्रत्येक उपलब्धियों को देश के प्रथम प्रधानमंत्री को समर्पित करने की यह कवायद किसी भी कांग्रेसी को अपना राजनीतिक कॅरियर चमकाने के लिए जरूरी हो सकती है, लेकिन इससे उन तमाम भारतीयों के संघर्ष की अनदेखी होती है जो किसी तरह अपनी गुजर-बसर के लिए कड़ी जद्दोजहद कर रहे हैं और जो अपनी अगली पीढ़ी के जीवन स्तर को सुधारने में जुटे हैं उनके लिए कांग्रेसियों के ऐसे जुमलों का कोई अर्थ नहीं। हां वह इतना जरूर देख सकते हैं कि इतने वर्षों में भी कांग्रेस नेहरू-गांधी परिवार की एक तरह से जागीर ही बनी हुई और वह खुद को इस परिवार की छाप से मुक्त नहीं करा पाई है। इस तरह की बयानबाजी से कांग्रेसी नेताओं ने अपनी एक अलग ही छवि गढ़ ली है।

इस सिलसिले में 2014 के आम चुनाव से पहले एक और कांग्रेस नेता के बयान की ही मिसाल लेते हैं जिन्होंने कहा था प्रधानमंत्री बनने से बेहतर है कि मोदी कांग्रेस कार्यालय के बाहर चाय का स्टाल लगाएं। चुनावी नतीजों ने कांग्रेस को आईना दिखा दिया और वह लोकसभा में अपनी न्यूनतम सदस्य संख्या पर सिमट गई। वहीं

वैश्विक नेताओं की जमात में अपना स्थान बना चुके प्रधानमंत्री मोदी ने अपनी ओबीसी जड़ों या गरीब पृष्ठभूमि की पहचान जाहिर करने में कभी हिचकिचाहट नहीं दिखाई। वास्तव में कई अवसरों पर तो उन्होंने इसे इस नजरिये के साथ पेश किया कि यह महान देश कितनी संभावनाओं से भरा है जहां उनके जैसा वंचित तबके का व्यक्ति भी शीर्ष तक पहुंच सकता है।

प्रधानमंत्री ने गेंद कांग्रेस के पाले में डालते हुए कहा कि अगर वह वास्तव में नेहरू द्वारा पोषित लोकतांत्रिक मूल्यों में विश्वास करती हैं तो गांधी-नेहरू परिवार से इतर किसी प्रतिबद्ध कांग्रेसी को पार्टी की कमान सौंपकर उसे पूर्ण कार्यकाल तक काम करने दें। यह एक ऐसी सीधी चुनौती थी जो कांग्रेस नेताओं को रास नहीं आई। यह भारतीयों की मौजूदा पीढ़ी को वास्तविकता से साक्षात्कार कराना भी है जो देश की सबसे पुरानी पार्टी का इतिहास भूल गए हैं। यह एक समय में कई दिग्गजों की विविधता भरी पार्टी पार्टी थी, लेकिन आज वह महज एक परिवार की मिल्कियत बनकर रह गई है।

पूर्व केंद्रीय मंत्री पी चिदंबरम ने प्रधानमंत्री की चुनौती का जवाब देने की कमान संभाली। उन्होंने आजादी के बाद कांग्रेस के ऐसे अध्यक्षों के नाम गिनाए जिनका गांधी-नेहरू परिवार से कोई संबंध नहीं था। हालांकि उन्होंने इन अध्यक्षों के कामकाज और अनुभव का ब्योरा नहीं दिया। यह कहने में कोई संदेह नहीं कि इस पार्टी को निष्क्रियता ने ऐसा घेर लिया है कि इसने आंतरिक लोकतंत्र को ही ताक पर रख दिया है। गत वर्ष जब राहुल गांधी कांग्रेस अध्यक्ष नियुक्त हुए थे तो उम्मीद के मुताबिक कोई उन्हें चुनौती देने वाला नहीं था। इसीलिए यह कहना उचित ही है कि वह कांग्रेस अध्यक्ष चुने नहीं गए, बल्कि नियुक्त हुए। जिस मीडिया का दायित्व इस पर सवाल उठाना था वही इसी अनुमान की पुष्टि में जुटा रहा कि आखिर राहुल गांधी कब औपचारिक रूप से अध्यक्ष पद संभालेंगे? इस पूरी कवायद को किसी राजकुमार के राज्याभिषेक की तरह कवर किया गया। इस पार्टी में कड़ी प्रतिस्पर्धा का लंबा इतिहास रहा है।

नेताजी और नेहरू की प्रतिद्वंद्विता भी उनमें से एक थी। एक वक्त वह भी था जब स्वतंत्रता संग्राम के दौर वाली कांग्रेस ने भारत में लोकतंत्र का खाका तैयार किया और वह एक सशक्त राजनीतिक शक्ति बनी। आज यह उसी प्रतिस्पर्धी भाव का आवरण मात्र रह गई है जो लोकतांत्रिक मूल्यों की विशिष्टता माने जाते हैं।

चिदंबरम ने जिन बातों का उल्लेख नहीं किया उन्हें तथ्यों के साथ पेश करना बेहद जरूरी है ताकि लोगों को यह अंदाजा लग सके कि एक वक्त किस मुकाम पर रही पार्टी आज किस स्तर तक पहुंच गई है? वर्ष 1978 के बाद से केवल सात वर्षों के लिए ही पार्टी अध्यक्ष पद नेहरू-गांधी परिवार के पास नहीं रहा। गांधी परिवार से इतर पार्टी के अंतिम अध्यक्ष सीताराम केसरी रहे जिन्हें बहुत ही अमर्यादित तरीके से पद से हटाया गया। आजादी के बाद से नेहरू-गांधी परिवार के बाहर से कांग्रेस के 15 अध्यक्ष बने जिनमें से आठ को बहुत खराब परिस्थितियों में अपने पद से विदाई लेनी पड़ी।

पार्टी अध्यक्ष के साथ ही प्रधानमंत्री रहे पीवी नरसिम्हा राव का तो ऐसा अपमान किया गया कि उनकी पार्थिव देह को कांग्रेस मुख्यालय में ही नहीं रखने दिया गया। ऐसे अनिष्ट संकेतों की शुरुआत तो आजादी मिलने के बाद ही हो गई थी। इसके पहले शिकार बने आचार्य कृपलानी जो तब पार्टी अध्यक्ष थे जब देश को आजादी मिल रही थी। उन्होंने पंडित नेहरू की नीतियों की कड़ी आलोचना करते हुए पार्टी छोड़ी और चीन के साथ युद्ध में हार के बाद सरकार के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव भी पेश किया। यह पहला अवसर था जब देश में अविश्वास प्रस्ताव लाया गया। इस मिसाल से एक परंपरा भी बन गई। इस पूरे प्रकरण में यह भी दिखा कि गांधीवादी कृपलानी नेहरू के नेतृत्व और शासन शैली से कितने असहज और असंतुष्ट हो गए थे।

पुरुषोत्तम दास टंडन भी ऐसे ही गांधीवादी थे जिन्हें सरदार पटेल का भी समर्थन हासिल था। अध्यक्ष पद के लिए हुए चुनाव में उन्होंने नेहरू के प्रत्याशी को हराया, लेकिन पार्टी के आंतरिक सत्ता संघर्ष ने उनके लिए हालात इतने दुरूह बना दिए कि

वह अपना कार्यकाल भी पूरा नहीं कर पाए। पार्टी में ऐसे प्रताड़ित अध्यक्षों की फेहरिश्त यहीं खत्म नहीं हो जाती। तमिलनाडु के क्षत्रप और पार्टी अध्यक्ष रहे कामराज को आपातकाल के दौरान ऐसी ही मुश्किल से दो-चार होना पड़ा जब उन्हें यह अहसास कराया गया कि उनकी वजह से ही हालात इतने बिगड़े। उन्हें भी अध्यक्ष पद छोड़ना पड़ा। आज जब कांग्रेसी तमिलनाडु में उनकी विरासत को भुनाने की जुगत भिड़ाते हैं तो स्वाभाविक रूप से वहां उन्हें कड़े विरोध का सामना करना पड़ता है।

चिदंबरम ने नेहरू-गांधी परिवार से इतर कांग्रेस पार्टी के अध्यक्षों का जो ब्योरा पेश किया अगर मै उनकी स्थिति और प्रदर्शन आदि का विश्लेषण करने लगूं तो एक पूरी किताब भी कम पड़ेगी। यदि भारत की सबसे पुरानी पार्टी अपने कायाकल्प को लेकर गंभीर है तो उसके नेताओं के लिए यह बेहद जरूरी है कि वे बतौर पार्टी अध्यक्ष अपने उन नेताओं का नाम सामने रखने से पहले उनकी विरासत पर गौर करें जिनके नाम कांग्रेस के इतिहास में खो गए या फिर जिन्हें वहां से खारिज कर दिया गया।

[लेखिका पटकथा लेखक एवं स्तंभकार है [